'अप्प दीपो भव'

वॉयस ऑफ बुद्धा

Postal Reg. No.-DL(ND)-11/6144/2016-18
WPP Licence No.- U(C)-101/2017-18
R.N.I. No. 68180/98

Date of Publication : 31.07.2018
Date of Posting on concessional rate :
2-3 & 16-17 of each fortnight

मूल्य : पाँच रूपये

प्रेषक : डॉ0 उदित राज (राम राज) चेयरमैन – जस्टिस पब्लिकेशंस, टी–22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली–110001, फोन : 23354841–42

Website : www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com

● वर्ष : 21 ● अंक 17 ● पाक्षिक ● द्विभाषी ● कुल पृष्ठ संख्या 8 ● 16 से 31 जुलाई, 2018

संघर्ष से सफलता की ओर डॉ. उदित राज के जीवन की एक अनकही, अनसुनी कहानी ''द क्रूसेडर''

फिल्म विश्लेषण

आधुनिक भारत में समसामयिक राजनीति को मैनें बीते वर्षो में कई आयामों से होकर गुजरते देखा है। आम जनता खासकर युवाओं में समसामयिक राजनीति के गिरते स्तर को देखकर क्षोभ एवं निराशा का भाव है। अगर आप गौर करें तो पाएंगे कि वंशवाद एवं भ्रष्टाचार की चासनी में लिपटी राजनीति का कॉकटेल इस मुल्क को खोखला करते जा रहा है । आम भारतीयों की तरह मैं भी इसी तरह की निराशा के भाव में जीने लगा था एवं कभी–कभी तो ऐसा महशूस होता है था की देश के आम नागरिक की नियति में ही लिखा है हर पांच साल में नए–नए सपने देखना और फिर उस सपने को अपनी आँखों के सामने मरते देखना।

मैं कोई राजनीतिक व्यक्ति नहीं हूँ न ही राजनीतिक विश्लेषक ही हूँ पर देश की हालत पर वैसे ही नजर रखना चाहता हूँ जैसे कोई एक आम जागरूक नागरिक नजर रखता है, भले ही वो आदमी कितना ही विवश एवं प्रभावहीन ही क्यूँ न हो। आज से तकरीबन दो बर्ष पूर्व किसी समाजिक कार्यक्रम में मैंने भाजपा सांसद डॉ उदित राज को देखा, उनकी कार्यशैली एवं सादगी मुझे उनको औरों से अलग प्रतीत हुई। न चाहते हुए भी मैं उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होता चला गया। इस बीच मैं उनसे कई बार मिला और उनके बारे में और ज्यादा जानने की मेरी जिज्ञासा बढ्ती चली गयी। एक कहावत तो आपने सुनी ही होगी

श्री लाल कृष्ण आडवाणी जी का स्वागत करते हुए डॉ. उदित राज एवं उनकी पत्नी श्रीमती सीमा राज

''जितना ज्यादा जानने की आप कोशिश करते है आपको उतना ही ज्यादा पता चलता है कि आप कितना कम जानते है उस विषय को'' खैर कई अवसरों पर मिलने–जुलने के दौरान मैं छोटे–छोटे वीडियो बना लेता और फिर अपने काम में लग जाता। कालान्तर में डॉ. उदित राज जी के व्यक्तित्व को जानने के बाद मैं हैरान रह गया। इतना दर्द, इतना संघर्ष, समाज के वंचितों–शोषितों एवं दलितों के प्रति इतनी करुणा वो भी इतना निःस्वार्थ! अपने दम पर सड़क से संसद तक का गौरवशाली सफर यह मेरे लिए एक नई कहानी की स्क्रिप्ट जैसी थी।

मैंने अपने जीवन में कई ऐसे ज्वलन्त मुद्दों पर आधारित फिल्में बनाई है जिसके पीछे की सोच थी की समाज का पुनर्जागरण हो एवं सामाजिक न्याय की लड़ाई को एक नई धार मिल सके। फिर मुझे ख्याल आया क्यूँ न डॉ. उदित राज जी के जीवन संघर्षो एवं इनके समाजिक न्याय के प्रति त्याग को परदे पर प्रस्तुत किया जाये ताकि निराशा के गर्त में जी रहे युवाओं को कुछ बनने एवं कुछ करने की प्रेरणा मिल सके, उनके अन्दर साकारात्मकता एवं नई उर्जा का संचार हो सके । उन युवाओं के लिए भी मेरे दिल में ख्याल आया जो संसाधनहीन होते हुए भी अपनी छोटी आँखों से बड़े सपने देखते हैं लेकिन उनको एक पथ प्रदर्शक की जरुरत होती है इन्ही उदेश्यों की पूर्ति हेतु ''द क्रूसेडर'' का निर्माण कार्य मैंने प्रारंभ किया।

मेरे लिए चुनौतियाँ काफी बढ़ गयी थी क्यूँकि यह एक सच्ची कहानी थी इसमें मैं फिक्सन नहीं डालना चाहता था ताकि इस कहानी की आत्मा को ठेस न पहुंचे। बित्तीय समस्या अलग थी क्यूँकि यह मेरी फिल्म थी जिसके लिए संसाधन भी मुझे खुद ही जुटाने थे। मैं अपनी टीम के साथिओं के साथ इलाहबाद पहुंचा और डॉ. उदित राज जी के पैत्रिक गाँव रामनगर जब पहुंचा

शेष पृष्ठ 4 पर

2 अप्रैल को बंद किये गए दलितों को रिहा किया जाए और मुकदमे वापस लिए जाएं

भीम आर्मी के चीफ चंद्रशेखर को रिहा किया जाए एवं पूर्व न्यायधीश ए.के गोयल को एन.जी.टी का चेयरमेन बनाये जाने पर दलितों में रोष एवं निराशा का भाव हैं।

नई दिल्ली, 24 जुलाई 2018, आज लोकसभा में शून्यकाल के दौरान सांसद डॉ. उदित राज ने एक साथ कई दलित मुद्दों को उठाकर सदन एवं सरकार को दलित जनमानस की चिंताओं से अवगत करवाया। लोक सभा में बोलते हुए डॉ. उदित राज ने कहा कि समाज के तथाकथित सामन्ती सोच वाले लोग ये बात हजम नहीं कर सके की दलित संगठन भी भारत बंद कर सकते है। डॉ. उदित राज ने सरकार से आग्रह करते हुए कहा कि 2 अप्रैल को दलित संगठनों द्वारा आयोजित भारत बंद के दौरान जिन दलित सत्याग्रहियों को अभी तक जेल में बंद कर रखा है उन्हें सरकार अबिलम्ब रिहा करवाए ताकि इनको न्याय मिल सके। डॉ. उदित राज ने कहा कि भारत बंद के दौरान देश के कई राज्यों में 10 दलित सत्याग्रहियों की मौत हुई। दरअसल ये हत्याएं कुछ असामाजिक तत्वों के द्वारा किये गए जो अधिकतर सवर्ण समाज के लोग थे। इस घटना के बाद अभी भी हरियाणा के कैथल में 8 लोग, उत्तर–प्रदेश के मेरठ में 15 नाबालिग सहित लगभग 150 और मध्यप्रदेश के जिला मुरैना में 3 लोग अभी भी जेल में बंद हैं इसके अतिरिक्त राजस्थान में दलितों को जमानत पर रिहा तो किया गया लेकिन उनके ऊपर अभी तक दर्ज फर्जी मुकदमे वापस नहीं लिए गए हैं। 2 अप्रैल की घटना के बाद दलितों के साथ अत्याचार और भी बढ़ गया है जिसके लिए कहीं न कहीं न्यायपालिका एवं प्रशासन दोनों जिम्मेदार है। आगे उन्होंने कहा कि इससे पहले भी देश में कई अन्दोलन हुए हैं लेकिन इतने बड़े स्तर पर गिरफ्तारी पहले कभी नहीं हुई न ही जान माल की इतनी हानि हुई। मेरा राज्य सरकारों से आग्रह है कि वे अपने–अपने राज्य की विभिन्न जेलों में बंद सभी दलित सत्याग्रहियों को अबिलम्ब रिहा करे। डॉ. उदित राज ने उपसभापति को सम्बोधित करते हुए कहा कि भीम आर्मी के चीफ चंद्रशेखर को कई महीनों से जेल में बंद कर रखा है और उसका स्वास्थ्य भी दिन प्रतिदिन बिगड़ता जा रहा है अतः मैं अनुरोध करता हूँ कि चंद्रशेखर को जल्द से जल्द रिहा किया जाये।

डॉ उदित राज ने अपने संबोधन में न्यायपालिका के रवैये एवं उनके हालिया दलित विरोधी फैसले पर भी कुठाराघात किया एवं कहा कि न्यायधीश श्री ए. के. गोयल जिन्होंने ''अनुसूचित जाति/जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम 1989'' को कमजोर करने वाले फैसले दिए एवं अन्य दलित विरोधी फैसले उन्होने अपने पद पर रहते हुए कई दलित विरोधी फैसले सुनाये ये सर्वविदित है। अब सरकार ने श्री ए. के. गोयल को एनजीटी जैसे महत्वपूर्ण प्राधिकरण का चेयरमेन सरकार ने नियुक्त किया है जो एक तरह से उनको पदोन्नति देने जैसा है। सरकार के द्वारा इस नियुक्ति के खिलाफ दलित समुदाय में रोष एवं निराशा का भाव है।

जब पुर्तगालियों ने हिंदुस्तान का इतिहास बदल कर रख दिया

जफर सैयद
बीबीसी उर्दू, इस्लामाबाद

आठ जुलाई 1497, शनिवार का दिन, वो दिन जिसे पुर्तगाल के शाही ज्योतिषयों ने बड़ी सावधानी से चुना था। राजधानी लिस्बन की गलियों में जश्न का सा माहौल है। लोग जुलूसों की शकल में समंदर किनारे का रुख कर रहे हैं जहां चार नए नकोर जहाज एक लंबा सफर शुरू करने के लिए तैयार खड़े हैं।

शहर के तमाम शीर्ष पादरी भी चमकीले लिबास पहलने आशीर्वाद देने पहुंच गए हैं और समूह गान कर रहे हैं भीड़ उनकी आवाज से आवाज मिला रही है। बादशाह रोम मैनवल इस मुहिम में व्यक्तिगत दिलचस्पी ले रहे हैं। वास्को डी गामा के नेतृत्व में चारों जहाज लंबे समुद्री सफर के लिए जरूरी नए उपकरणों व जमीनी और आसमानी नक्शों से लैस हैं। साथ ही साथ उन पर उस दौर के आधुनिक तोपें भी तैनात हैं। जहाज के 170 के करीब नाविकों ने बिना आस्तीन वाली क़मीजें पहन रखी हैं। उनके हाथों में जलती हुई मोमबत्तियां हैं और वो एक फौजी दस्ते की तरह जहाजों की तरफ धीमे-धीमे मार्च कर रहे हैं। ये लोग उस मंजर की एक झलक देखने और मल्लाहों को विदा करने पहुंचे हैं। उन की आंखों में गम और खुशी के मिले जुले आंसू हैं। वो जानते हैं कि सालों लंबे इस सफर पर जाने वालों में से बहुत से, या शायद सभी, वापस नहीं आ सकेंगे। उससे बढ़कर उन्हें ये भी अहसास है कि अगर सफर कामयाब रहा तो यूरोप की एक खुरदुरेपन में बसा एक छोटा सा देश पुर्तगाल दुनिया के इतिहास का एक नया पन्ना उलटने में कामयाब हो जाएगा।

इतिहास की नई करवट

ये अहसास सही साबित हुआ। दस माह और बारह दिन बाद जब ये जहाजी बेड़ा हिंदुस्तान के साहिल पर उतरा तो उस की बदौलत यूरोप की समुद्री तन्हाई ख़त्म हो गई, दुनिया की विपरीत दिशाओं में बसे पूर्व और पश्चिम पहली बार समुद्री रास्ते से न सिर्फ एक दूसरे से जुड़े बल्कि टकरा गए। अटलांटिक महासागर और हिंद महासागर आपस में जुड़कर एक जलमार्ग बन गए और दुनिया के इतिहास ने एक नई करवट बदली।

दूसरी तरफ ये किसी यूरोपीय देश की ओर से एशिया व अफरीका में उपनिवेश स्थापित करने की पहल भी साबित हुआ जिसके कारण दर्जनों देश सदियों तक बदतरीन हालात की चक्की में पिसते रहे और जिससे निकलने की खातिर वो आज भी हाथ-पैर मार रहे हैं। इस वाकये ने दक्षिण एशिया के इतिहास को भी यूं झिंझोड़ दिया कि आज हम जो जिंदगी गुजार रहे हैं, वास्को डि गामा के उस सफर के बगैर उसकी कल्पना भी मुमकिन नहीं थी। उस ऐतिहासिक सफर की बदौलत दक्षिण एशिया बल्कि तमाम एशिया पहली बार मक्का, आलू, टमाटर, लाल मिर्च और तम्बाकू जैसी फसलों से परिचित हुआ जिनके बगैर आज की जिंदगी की कल्पना नहीं की जा सकती। पुर्तगालियों ने दक्षिण एशिया की संस्कृति को किस तरह प्रभावित किया? उसकी मिसाल हासिल करने के लिए जब आप बाल्टी से पानी उडेल कर साबुन से हाथ धोकर तौलिए से सुखाते हैं और अपने बरामदे में फीते से नाप कर मिस्त्री से एक फालतू कमरा बनवाते हैं और फिर नीलाम घर जाकर उस कमरे के लिए अलमारी, मेज और सोफा खरीद लाते हैं और फिर चाय पर्च में डाल कर पीते हैं तो एक ही वाक्य में पुर्तगाली के 15 शब्द आप इस्तेमाल कर चुके होते हैं। ये पुर्तगाल की हिंदुस्तान तक पहुंचने की पहली कोशिश नहीं थी. पश्चिमी यूरोप का ये छोटा सा देश कई अर्सों से अफरीका के पश्चिमी तटों की नक्शाबंदी कर रहा था और उस दौरान सैकड़ों नाविकों की कुर्बानी भी दे चुका था। आखरि यूरोपी पुर्तगाल को हिंदुस्तान में इस कदर दिलचस्पी क्यों थी कि वो उस पर अपने इतने संसाधन झोंकने के लिए तैयार था? अभी कुछ ही साल पहले 1453 में उस्मानी सुल्तान मेहमद द्वितीय ने कांस्टेंटिनोपल (आज का इस्तांबुल) पर कब्जा करके यूरोप की बुनियाद हिला दी थी। अब पूर्व से अधिकतर व्यापार उस्मानियों या फिर मिस्र के जरिए ही संभव था जो हिंदुस्तान और एशिया के दूसरे इलाकों में मिलने वाले उत्पादों खासतौर पर मसालों पर भारी कर वसूल करते थे।

दूसरी ओर यूरोप के अंदर भी वेनिस और जेनेवा ने एशिया के साथ जमीनी रास्तों से सफर वाले व्यापार पर एकाधिकार कायम कर रखा था जिससे दूसरे यूरोपीय देशों खास तौर पर स्पेन और पुर्तगाल को बड़ी परेशानी थी। यही वजह है कि वास्को डी गामा के सफर से पांच साल पहले स्पेन ने क्रिस्टोफर कोलंबस के नेतृत्व में पश्चिमी रास्ते से हिंद्स्तान तक पहुंचने के लिए एक अभियान रवाना किया था। लेकिन पुर्तगालियों को मालूम था कि कोलंबस की मंसूबाबंदी कच्ची और उनकी जानकारी कम है और वो कभी भी हिंदुस्तान नहीं पहुंच पाएंगे। वाकई कोलंबस मरते दम तक समझते रहे कि वो हिंदुस्तान पहुंच गए हैं वो दुर्घटनावश एक नया महाद्वीप खोज बैठे।

अलबत्ता पुर्तगालियों को अपनी खोजों और पिछले समुद्री अभियानों से मालूम हुआ था कि अगर अटलांटिक सागर में दक्षिण की ओर सफर किया जाए तो अफ्रीका के लटकते हुए दामन के नीचे से हो कर हिंद महासागर तक पहुंचा और एशिया से व्यापार में बाकी यूरोप का पत्ता काटा जा सकता है। रास्ते में पेश आने वाली बेपनाह मुश्किलों के बाद वास्को डी गामा यूरोप के इतिहास में पहली बार अफरीका के दक्षिणी साहिल को छूने में कामयाब हो गए। हालांकि हिंदुस्तान अभी भी हजारों मील दूर ता और उसका सही रास्ता पहचानना अंधेरे में सुई तलाशने जैसा था। खुशकस्मिती से उन्हें केन्या के तटीय शहर मालिंदी से एक गुजराती मुसलमान व्यापारी मिल गया जो हिंद महासागर से ऐसे परिचित था जैसे अपनी हथेली की लकीरों से। उस वाक्ये के पांच सदियों बाद भी अरब के जाहजी उस गुजराती व्यापारी की नस्लों को कोसते हैं जिसने ''फिरंगियों'' पर हिंद महासागर का राज खोल कर यहां स्थापित हजारों साल के व्यापारिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर दिया। उसी नाखुदा की रहनुमाई में 20 मई सन 1498 को 12 हजार मील के सफर और दल के दर्जनों लोगों को गंवाने के बाद वास्को डी गामा आखरिकार हिंदुस्तान में कालीकट के साहिल तक पहुंचने में कामयाब रहे।

उस जमानों के यूरोप की हिंदुस्तान से बेखबरी का अंदाजा इस से लगाएं कि कालीकट में निवास के दौरान वास्को डी गामा हिंदुओं को कोई गुमराह ईसाई फिरका समझते रहे। पुर्तगाली नाविक मंदिरों में जाकर हिंदू देवियों की मूर्तियों को बीवी मरियम और देवताओं को ईसाई औलिया समझकर उनके सामने झुकते रहे। कालीकट के ''समंदरी राजा'' कहलाए जाने वाले ने अपने महल में वास्को डी गामा का जबरदस्त स्वागत किया। बरसती बारिश में वास्को डी गामा को छतरी लगी पालकी में बिठाकर बंदरगाह से दरबार तक लाया गया। लेकिन ये खुशगवारी उस वक्त तल्खी में बदल गई जब उस जमाने की परंपरा के मुताबिक वास्को ने राजा को तोहफे पेश किए (लाल रंग की हैट, पीतल के बर्तन, चंद किलो चीनी और शहद) वो इस कदर मामूली निकले की मेहमानदारी के वजीर ने उन्हें राजा को दिखाने से इनकार कर दिया। इसका नतीजा ये निकला कि स्थानीय अधिकारी वास्को डी गामा को किसी अमीर देश के शाही यात्री के बजाए समुद्री लड़ाकू समझने लगे। समुद्री राजा ने वास्को डी गामा की ओर से व्यापारिक कोठियां स्थापित करने और पुर्तगाली व्यापारियों का टैक्स माफ करने की अपील रद्द कर दी। हालात यहां तक पहुंच गए कि स्थानीय लोगों ने हल्ला बोल कर कई पुर्तगालियों को मार डाला। वास्को डी गामा के गुस्से का कोई ठिकाना ना रहा। उसके जहाजों में जो तोपें तैनात थीं उसका समुद्री राजा के पास कोई जवाब नहीं था। उन्होंने कालीकट पर बम्बारी करके कई इमारतें और शाही महल तबाह कर दिए और समंदरी राजा को देश के भीतरी हिस्सों में भागने पर मजबूर कर दिया। राजनयिक विफलता अपनी जगह, लेकिन कालीकट में तीन माह रहने के दौरान यहां की मंडियों से बेशकीमती मसाले इतनी तादाद में और इतने सस्ते मिले कि उसने जहाज के जहाज भरवा दिए पूरी ईसाई दुनिया के लिए मसाले

वास्को डी गामा का वापसी का सफर बेहद मुश्किलों भरा रहा। आधा दल बीमारियों और एक जहाज तूफान का शिकार हो गया। आखरिकार लिस्बन से रवाना होने के ठीक दो साल बाद दस जुलाई 1499 को 28 हजार किलोमीटर का सफर तय करने के बाद जब पुर्तगाली बेड़ा वापस लिस्बन पहुंचा (वास्को डी गामा अपने बाई की बीमारी की वजह से एक द्वीप पर रुक गए थे) तो उसका जबरदस्त स्वागत किया गया। ये अलग बात है कि 170 के दल में से सिर्फ 54 लोग ही जिंदा लौट सके थे। शाह मैनवल द्वितीय ने ये बात सुनिश्चित की कि तमाम यूरोप को उसकी कामयाबी की ख़बर तुरंत मिल जाए। उन्होंने स्पेन की महारानी इसाबेला और शाह फर्डीनांड को ख़त लिखते हुए धार्मिक कार्ड खेलना जरूरी समझा- ख़ुदा के करम से वो व्यापार जो इस इलाके के मुसलमानों को मालदार बनाती है, अब हमारी सल्तनत के जहाजों के पास होगा और ये मसाले तमाम ईसाई दुनिया तक पहुंचाए जाएंगे। लेकिन सवाल ये था कि एक छोटा सा देश हजारों मील दूर से बड़े पैमाने पर स्थापित व्यापारिक नेटवर्क कैसे तोड़ पाने की उम्मीद रख सकता है?

पुराने व्यापारिक रास्ते

वास्को ने कालीकट में अपने निवास के दौरान मुसलमानों के कम से कम पंद्रह सौ जहाज गिने थे। लेकिन उसने एक दिलचस्प बात भी नोट की थी- ये जहाज अकसर और अधिकतर निहत्थे हुआ करते थे। हिंद महासागर में होने वाला व्यापार आपसी सहयोग के उसूलों पर स्थापित था और राजस्व इस तरह तय किया जाता था कि दोनों पक्षों को फायदा हो। पुर्तगाल उन उसूलों पर काम नहीं करना चाहता था। उसका मकसद ताकत के जरिए अपना एकाधिकार कायम करके तमाम दूसरे पक्षों को अपनी शर्तों पर मजबूर बनाना था। जल्द ही पुर्तगाल का ये मंसूबा सामने आ गया। वास्को डी गामा के पहुंचने के छह महीने अंदर अंदर जब पेद्रो अल्वारेज काबराल के नेतृत्व में दूसरा पुर्तगाली बेड़ा हिंदुस्तान की ओर रवाना हुआ तो उस में 13 जहाज शामिल थे और उसकी तैयारी व्यापारिक अभियान से ज्यादा जंगी कार्रवाई की थी।

हर मुमकिन फायदा

काबराल को पुर्तगाली बादशाह ने जो लिखित सलाह दी उससे उनकी महत्वकांक्षा स्पष्ट हो जाती है – ''तुम्हें समंदर में मक्का के मुसलमानों का जो भी जहाज मिले उस पर हर संभव कोशिश करके कब्जा करो, और उस पर लदे माल और सामान और जहाज पर मौजूद मुसलमानों को अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करो। उन से जंग करो और जितना तुमसे हो सके उन्हें नुकसान पहुंचाने की कोशिश करो।'' इस सलाह की रोशनी में सशस्त्र बेड़े ने कालीकट पहुंच कर मुसलमान व्यापारियों के जहाजों पर हमले करके माल लूट लिया और जहाजों को यात्रियों और नाविकों समेत आग लगा दी।

इसी पर चिंता न करते हुए काबराल ने कालीकट पर दो दिन तक बमबारी कर के शहर के लोगों को घर-बार छोड़कर भागने पर मजबूर कर दिया। यही वजह है कि जब वो कोचीन और कन्नूर की बंदरगाहों पर उतरा तो वहां के राजाओं तक ख़बरें पहले ही पहुंच चुकी थीं, इसलिए उन्होंने पुर्तगालियों को उनकी शर्तों पर व्यापारिक ठिकाने कायम करने की अनुमति दे दी। काबराल के मसालों से लदे जहाज जब वापिस पुर्तगाल पहुंचे तो जितना जश्न लिस्बन में मनाया गया उससे ज्यादा मातम वेनिस में मना। एक इतिहासकार लिखते हैं- ''ये वेनिस के लिए बुरी ख़बर है। वेनिस के व्यापारी सही मायनों में मुश्किलों में घिर गए हैं।''

गन बोट व्यापार

ये भविष्यवाणी सही साबित हुई। जब 1502 में वेनिस के जहाज एलेक्जेंड्रिया के बंदरगाह पर पहुंचे तो पता चला कि वहां मसाला न होने के बराबर है, जो है भी उसकी कीमतें आसमान पर पहुंच गई हैं। अगली बार जब वास्को डी गामा ने हिंदुस्तान का सफर किया तो उनके तेवर कुछ और थे। उन्होंने अफ्रीका के पूर्वी तट के शहरों के बिना वजह और अंधाधुंध बमबारी का निशाना बनाया और उगाही वसूल की। वहां से जाने से पहले उसने मुसलमान व्यापारियों को व्यापार न करने देने का वादा भी लिया। गन बोट डिप्लोमेसी बल्कि गन बोट व्यापार की इससे बेहतर मिसाल मिलना मुश्किल है। हिंदुस्तान के सफर के दौरान जो जहाज उसके रास्ते में आया, वो लौट कर डुबा दिया गया। उस दौरान हाजियों का एक मीरी नाम का जहाज उसके हाथ लग गया जिस पर चार सौ यात्री सवार थे जो कालीकट से मक्का जा रहे थे। वास्को डी गामा ने यात्रियों को बांध कर जहाज को आग लगा दी। चश्मदीदों के मुताबिक जलते हुए जहाज के सिरे पर औरतें अपने बच्चों को हाथ में उठाकर रहम की भीख मांग रहीं और वास्को डी गामा अपने जहाज से तमाशा देखते रहे। मालाबार के साहिलों पर आज भी ''मीरी'' जहाज की तबाही के नोहे पढ़े जाते हैं। वास्को डी गामा का स्पष्ट मकसद पूरे इलाके में पुर्तगाल की दहशत फैलाना था। वास्को अपने मकसद में पूरी तरह कामयाब रहा। ये ख़बरें समुद्री रास्तों पर यात्रा करते हुए हिंद महासागर के दूर दराज इलाकों में पहुंच गईं। हिंदुस्तान के तटीय शहरों के पास बेहतरीन पुर्तगाली तोपों और पुर्तगालियों के आक्रामक रवैये का कोई जवाब नहीं था। उनके पास अब व्यापार की चाभियों को वास्को के हवाले करने के अलावा कोई रास्ता नहीं था। ये अंधाधुंध आक्रामकता पश्चिमी अपनिवेशवादियों के कायम होने की व्यवहारिक मिसाल थी। स्थानीय राजाओं के लिए ये बात अविश्वस्नीय थी कि कोई किसी को

शेष पृष्ठ 3 पर

पृष्ठ शेष 2 का

जब पुर्तगालियों ने हिंदुस्तान .....

समंदर में सफर करने से कैसे रोक सकता है ?

समुद्री डाकू

एशिया में वास्को डी गामा के ये तरीके व्यापार के बजाए समुद्री लूट समझे गए लेकिन यूरोप में ये रोजमर्रा की बात थी। पुर्तगाल दूसरे यूरोपीय देशों से जबरदस्त प्रतिस्पर्धा, व्यापार में फौजी ताकत के इस्तेमाल और दखल और फौजी ताकत में नई-नई तकनीक के इस्तेमाल के आदी थे। ये तमाम पूरे हिंद महासागर पर पुर्तगाल के एकाधिकार की शुरुआत थी। स्थानीय राजाों ने हर संभव मुकाबला करने की कोशिश की लेकिन हर मुठभेड़ में उन्हें हार ही मिली। जिसका नतीजा ये निकला कि आने वाली डेढ़ सदियों में पुर्तगालियों ने कन्नूर, कोचीन, गोवा, मद्रास और कालीकट के अलावा कई दूसरे तटीय इलाकों में समंदर पार ताकत के दम पर अपनी हकूमत कायम कर ली और वहां अपने वायसराय और गवर्नर तैनात कर दिए। दूसरे यूरोपीय देश ये तमाम खेल बड़ी दिलचस्पी से देख रहे थे और यही काम बाद में नीदरलैंड्स, फ्रांस और आखरिकार अंग्रेजों ने ईस्ट इंडिया कंपनी के रूप में दोहराया और पुर्तगालियों को उन्हीं के खेल में शिकस्त देकर न सिर्फ हिंदुस्तान बल्कि पूरे हिंद महासागर पर कब्जा कर लिया. सिर्फ गोवा और दमन और दीव के इलाके दक्षिण एशिया की आजादी तक पुर्तगालियों के पास रहे. आखरिकार दिसंबर 1961 में भारत ने फौज भेज कर ये इलाके पुर्तगालियों के कब्जे से आजाद किए।

व्यापारिक नेटवर्क

लेकिन इससे पहले करीब डेढ़ सदियों तक पुर्तगाली हिंदुस्तान से गरम मसाला, अदरक, इलायची, लौंग और कपड़ा, मलाया से दालचीनी, चीन से रेशम और बर्तन यूरोप ले जाते और वहां से उसके साथ ही वो यूरोपीय शराब, ऊन, सोना और दूसरे उत्पाद एशिया के अलग-अलग हिस्सों में बेचने लगे। यही नहीं, बल्कि वो ऐशिया और अफ्रीका के अलग-अलग हिस्सों के बीच व्यापारिक गतिविधियों पर भी काबिज हो गए और दूसरे तमाम व्यापारियों से भारी राजस्व वसूलने लगे। इसी दौरान अमीरीकी महाद्वीप की खोज हो चुकी थी और वहां स्पेन के अलावा खुद पुर्तगाल और दूसरे यूरोपीय देश ने नए उपनिवेश स्थापित करना शुरू कर दिया था। पुर्तगालियों ने उसी नई दुनिया से मक्का, आलू, तम्बाकू, अनानास, काजू और लाल मिर्च लाकर इनका हिंदुस्तान और ऐशिया के दूसरे हिस्सों में परिचय करवाया। आज बहुत से लोगों को लाल मिर्च हिंदुस्तानी खाने का अहम हिस्सा मालूम होती है लेकिन पुर्तगालियों से पहले यहां के लोग इससे परिचित नहीं थे।

साझा जबान

लेकिन पुर्तगालियों के भारत के साथ संबंध सिर्फ सैन्य और व्यापारिक ही नहीं रहे बल्कि भारत की संस्कृति और सभ्यता भी उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी। पुर्तगाली भाषा कई सदियों तक हिंद महासागर के बंदरगाहों की साझा जबान रही। यहां तक की डच, फ्रांसीसियों और अंग्रेजों तक को भारत आने के बाद पहले-पहले भारतीयों से पुर्तगाली सीखनी पड़ी। चाहें वो सिराजुद्दौला को शिकस्त देने वाले लॉर्ड क्लाइव भी स्थानीय हिंदुस्तानियों के साथ पुर्तगाली भाषा में ही बात करते थे। पुर्तगाली भाषा का असर स्थानीय भाषाओं पर भी पड़ा। यही वजह है कि दक्षिण एशिया की 50 से ज्यादा भाषाओं में पुर्तगाली शब्द पाए जाते हैं। हमने ऊपर हिंदी और उर्दू जबान में इस्तेमाल किए जाने वाले पुर्तगाली शब्दों का जिक्र किया था। ऐसे ही कुछ और शब्दों मे चाबी, पादरी, गिरजा, अंग्रेज, अंग्रेजी, पीपा, पासन, गोदाम, इस्त्री, काज, परात, भत्ता, पगार, अलफानसो (आम), पपाया, मारतोड़, तम्बाकू, बम्बा, मस्तूल शामिल हैं।

मुगलों को समंदर से दिलचस्पी नहीं थी।

1526 में जब बाबर ने हिंदुस्तान में मुगल सल्तनत की नींव डाली उस समय तक पुर्तगाल तमाम तटीय इलाकों पर कदम जमा चुका था। हालांकि मुगल मध्य एशिया के सूखे इलाकों से आए थे और उन्होंने समंदर का मुंह तक नहीं देखा था। इसलिए उन्होंने समंदरी मामलों को कोई अहमियत नहीं दी। पुर्तगालियों ने मुगलों से राजनयिक रिश्ते स्थापित कर लिए और अकबर, जहांगीर और शाहजहां को तरह-तरह के तोहफे भेजते रहे। खास तौर पर यूरोपीय पेंटिंग ने मुगलों को प्रभावित किया और उनका असर मगल दौर की कला पर भी नजर आया। दक्षिण एशिया को पुर्तगालियों की एक और देन के बगैर ये रिपोर्ट अधूरी ही रहेगी। हम सब बॉलीवुड के सुनहरे दौर के संगीत के प्रशंसक हैं। इस संगीत के प्रचार में गोवा से आने वाले पुर्तगाली मूल के संगीतकारों का बड़ा हिस्सा है जिन्होंने हिंदुस्तानी संगीत डायरेक्टरों को म्यूजिक अरेंजमेंट और आर्केस्ट्रा का इस्तेमाल सिखाया। आज भी अगर आप शंकर जय किशन, एसडी बर्मन, सी राम चंदर, ओपी नैयर, लक्ष्मीकांत प्यारे लाल जैसे संगीतकारों की फिल्में देखें तो ''म्यूजिक अरेंजमेंट'' के टाइटल तले आपको गोंजालवेज, फर्नांडो, डीसूजा, डीसिलवा जैसे कई पुर्तगाली नाम नजर आएंगे जो एक गुजरे हुए दौर की दास्तान सुनाते हैं।

https://www.bbc.com/hindi/india-44766939?ocid=socialflow_facebook

***

UGC की रिपोर्ट से खुलासा : ब्राह्मणवादी धूर्तों के मठ हैं देश के विश्वविद्यालय, जहां छीन लिया गया है दलित-पिछड़ों का हक

भारतीय संविधान में सामाजिक समरसता, समानता और सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है। सरल भाषा में कहें तो आरक्षण गैरबराबरी खत्म कर सदियों से वंचित समुदायों को शासन-प्रशासन में हिस्सेदारी देकर उन्हें राष्ट्र का अंग होने का अहसास दिलाना है। डॉ. अंबेडकर ने कहा था कि हम तब तक राष्ट्र नहीं बन सकते जब तक कि हमारे सुख-दुख साझा न हों। आरक्षण, आरक्षण की जरूरत समाप्त करने के लिए लागू हुआ था। लेकिन बड़ी सूक्ष्मता से इस देश में आरक्षण को डायल्युट किया जा रहा है और मानसिकता वही है कि हम तुम्हें सिस्टम में नहीं आने देंगे। देश में कुल 30 सेंट्रल यूनिवर्सिटी हैं, अब जरा इनका हाल देखिए.... देश के कुल 30 सेंट्रल यूनिवर्सिटी में 1057 प्रोफेसर हैं। आरक्षण के हिसाब से 1057 में से 15 प्रतिशत एस.सी, 7.5 प्रतिशत एस.टी, और 27 प्रतिशत ओबीसी वर्ग के प्रोफेसर होने चाहिए। क्योंकि संविधान अनुसूचित जाति (एस.सी) को 15 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति (एस.टी) 7.5 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों (ओबीसी) को 27 प्रतिशत आरक्षण देती है। लेकिन हकिकत ये है कि सेंट्रल यूनिवर्सिटी के इन 1057 प्रोफेसर में से मात्र 3.2 प्रतिशत एस.सी., 1.1 प्रतिशत एस.टी., और 1.1 प्रतिशत ओबीसी हैं। ये आकड़ा युजीसी ने अपने 2017 Annual Report में दिया है।

सीटों की संख्या के हिसाब से समझते हैं।

Professor –

देश के कुल 30 सेंट्रल यूनिवर्सिटी में 1057 प्रोफेसर हैं। UGC के 2017 का Annual Report बताता है कि इस 1057 प्रोफेसर में से 34 SC, 12 ST, 12 OBC वर्ग के हैं। जबकि आरक्षण के हिसाब से 1057 प्रोफेसर में से 158 एस.सी, 79 एस.टी, 285 ओबीसी वर्ग के होने चाहिए। वहीं समान्य वर्ग के प्रोफेसर की संख्या 999 है यानी 94.51 प्रतिशत ये आंकड़े बताते हैं कि किस तरह आरक्षित वर्गो के संवैधानिक अधिकार को खत्म किया जा रहा है। ऐसे आकड़ों की वजह से भारत का महान संविधान धूमिल हो रहा है।

Type of University	Post	Number of Post	Number in Position out of Total					*Out of the Total		
		Sacnctioned	Gen.	OBC	SC	ST	Total	PwD	Muslim	Other Mino. Commu.
Central University	Assistant Professor	7888	4112	839	701	399	6051	107	1108	369
	Associate Professor	4006	2118	28	113	39	2298	16	344	86
	Professor	**2100**	**999**	**12**	**34**	**12**	**1057**	**9**	**168**	**37**
State University	Assistant Prfoessor	20417	10754	2961	1981	427	16123	73	243	204
	Associate Professor	7086	2804	608	354	51	3817	9	52	60
	Professor	**3747**	**1531**	**337**	**205**	**29**	**2102**	**8**	**32**	**39**
Deemed University	Assistant Profeessor	1796	1103	327	137	41	1608	17	17	45
	Associate Professor	452	227	53	12	1	294	1	5	9
	Professor	**266**	**150**	**19**	**2**	**0**	**171**	**0**	**4**	**1**

Associate Professor -

सेंट्रल यूनिवर्सिटी में Professor के अलावा Associate Professor और Assistant Professor की हालत भी ऐसी ही है। 30 सेंट्रल यूनिवर्सिटी में कुल 2298 Associate Professor हैं। इन 2298 में से 113 एस. सी., 39 एस.टी और 28 ओबीसी वर्ग के हैं। जबकि आरक्षण के हिसाब से 344 एस.सी., 172 एस.टी, 620 ओबीसी वर्ग के होने चाहिए। समान्य वर्ग की बात करें तो इन 2298 में से समान्य वर्ग के 1160 Associate Professor होने चाहिए जबकि हैं 2118।

Assistant Professor-

Assistant Professor के पदों का भी यही हाल है। 6051 Assistant Professor में से 399 एस.टी और 839 ओबीसी वर्ग के हैं। जबकि आरक्षण के मुताबिक, 907 एस.टी, 453 एस.टी और 1633 ओबीसी वर्ग के Assistant Professor होने चाहिए। समान्य वर्ग की बात करें तो इन 6051 में से समान्य वर्ग के 3055 Associate Professor होने चाहिए जबकि हैं 4112

http://boltaup-com/all&the&central&universities&failed&to&apply&reservation&policies/

***

पृष्ठ 1 का शेष

संघर्ष से सफलता की ओर डॉ. उदित राज के जीवन की.....

डॉ. उदित राज एवं उनकी पत्नी सीमा राज, द क्रूसेडर के निर्देशक अजय चिटनिस, फिल्म निर्माता-निर्देशक मधुर भंडाकर, संदीप माडवाह, अभि राज, सावेरी राज

तो उनके पुश्तैनी घर को देखकर मेरे सामने अनायास ही उदित राज जी के जीवन के कई पन्ने पलटते चले गए। उनके कई रिश्तेदारों एवं पड़ोसियों से हमने बात किया तो पाया इतने संघर्षो बड़े की परिणति के दौरान डॉ उदित राज ने कभी अपनी विचारधारा से समझौता नहीं किया न ही उन्होने अपनी जड़ को कभी भूलने की कोशिश किया।

बहरहाल फिल्म बनकर कुछ दिन पहले तैयार हुई एवं बंगलौर फिल्म फेस्टिवल में इसकी पहली स्क्रीनिंग हुई अब बारी दिल्ली की थी। स्क्रीनिंग के लिए दिल्ली का प्रतिष्ठित अम्बेडकर इंटरनेश्नल सेंटर तैयार था लेकिन तभी भारी बारिश ने हम लोगों की चिंताएं बढ़ा दी थी। लेकिन उस शाम जब ये स्क्रीनिंग शुरू हुई तो पूरा सभागार दर्शकों के खचाखच भरी थी । श्रधेय लालकृष्ण अडवाणी जी, श्री मनोज तिवारी जी, निर्माता-निर्देशक मधुर भंडारकर जी समेत तकरीबन 20 देशों के राजदूत की गरिमामयी उपस्थिति ने इस स्क्रीनिंग को यादगार बना दिया। इस फिल्म के दौरान दर्शक टक-टकी लगा कर डॉ. उदित राज जी के संघर्षो का वो अनछुआ किस्सा देख रहे थे जो आजतक न कभी किसी से कहा गया, न लिखा गया, न पढ़ा गया और न ही देखा गया था।

आज डॉ. उदित राज जी ने इतने बड़े एवं सम्मानित सरकारी पद का परित्याग करके जो सामाजिक न्याय की लड़ाई लड़ी एवं आज भी वो सड़क से सांसद तक अपने समाज के सम्मान एवं अधिकार की लड़ाई लड़ रहे हैं वो अब इस फिल्म के माध्यम से आपको जागृत करेगी। हर माँ-बाप जो अपना पेट काट कर भी अपने बच्चे को स्कूल भेजते है और वो बच्चे जो युनिफोर्म के बिना सरकरी विद्यालय के एक कोने में आज भी सिसकियाँ लेकर अपने वजूद की लड़ाई लड़ता है उनके लिए समर्पित है ये फिल्म।

अंत मैं आपसब से आग्रह करता हूँ आजतक आपने कई काल्पनिक फिल्में देखी होगी एक बार अपने परिवार एवं अपने बच्चों के साथ बैठकर ''द क्रूसेडर'' अवश्य देखें आपको इस फिल्म में एक बेटे के संघर्ष से सफलता एवं एक माता-पिता का बेटे लिए सच्चा त्याग आपको दिखेगा। इसे देखने के बाद आपको भारतीय राजनीति के प्रति निराशा एवं ना उम्मीद में भी डॉ. उदित राज जैसे जुगनू टिमटिमाते हुए आपको दिख जायेंगे जो खुद को जलाकर भी देश को अँधेरे से उजाले की तरफ ले जाने की लड़ाई लड़ रहे है !!

– अजय चिटनिस
(द क्रूसेडर के निर्देशक)

***

हूल विद्रोह : तिलका मांझी और सिदो-कान्हू सहित संताल आदिवासियों की शौर्य गाथा

आज 30 जून, 2018 संताल हूल दिवस है, यानी अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ विद्रोह दिवस। वैसे तो भारतीय इतिहास में अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ पहला विद्रोह 1857 है, मगर जब हम आदिवासियों के इतिहास को देखते हैं तो पाते हैं यह विद्रोह 1771 में ही तिलका मांझी ने शुरु कर दिया था। वहीं 30 जून, 1855 को संताल आदिवासियों ने सिदो, कान्हू, चांद, भैरव और उनकी बहन फूलो, झानो के नेतृत्व में साहेबगंज जिले के भोगनाडीह में 400 गांव के 40,000 आदिवासियों ने अंग्रेजों को मालगुजारी देने से साफ इंकार कर दिया। इस दैरान सिदो ने कहा था अब समय आ गया है फिरंगियों को खदेड़ने का। इसके लिए ''करो या मरो, अंग्रेजों हमारी माटी छोड़ो'' का नारा दिया गया था। अंग्रेजों ने तुरंत इन चार भाइयों को गिरफ्तार करने का आदेश जारी किया। गिरफ्तार करने आये दारोगा को संताल आंदोलनकारियों ने गर्दन काटकर हत्या कर दी। इसके बाद संताल परगना के सरकारी अधिकारियों में आतंक छा गया। बताया जाता है जब कभी भी आदिवासी समाज की परंपरा, संस्कृति और उनके जल, जंगल जमीन को विघटित करने का प्रयास किया गया है, प्रतिरोध की चिंगारी भड़क उठी।

30 जून 1855 का हूल इसी कड़ी का एक हिस्सा है। महाजनों, जमींदारों और अंग्रेजी शासन द्वारा जब आदिवासियों की जमीन पर कब्जा करने का प्रयास किया गया तब उनके खिलाफ आदिवासियों का गुस्सा इतना परवान चढ़ा कि इस लड़ाई में सिदो, कान्हू, चांद, भैरव और उनकी बहन फूलो, झानो सहित लगभग 20 हजार संतालो ने जल, जंगल, जमीन की हिफाजत के लिए अपनी कुर्बानी दे दी। इसके पूर्व गोड्डा सब-डिवीजन के सुंदर पहाड़ी प्रखंड की बारीखटंगा गांव का बाजला नामक संताल युवक की विद्रोह के आरोप में अंग्रेजी शासन द्वारा हत्या कर दी गई थी। अंग्रेज इतिहासकार विलियम विल्सन हंटर ने अपनी किताब 'द एनल्स ऑफ रूरल बंगाल' में लिखा है कि अंग्रेज का कोई भी सिपाही ऐसा नहीं था जो आदिवासियों के बलिदान को लेकर शर्मिंदा न हुआ हो। अपने कुछ विश्वस्त साथियों के विश्वासघात के कारण सिदो और कान्हू को पकड़ लिया गया और भोगनाडीह गांव में सबके सामने एक पेड़ पर टांगकर फांसी दे दी गयी। 20 हजार संतालों ने जल, जंगल, जमीन की हिफाजत के लिए अपनी कुर्बानी दे दी थी। अंग्रेजों ने प्रशासन की पकड़ कमजोर होते देख आंदोलन को कुचलने के लिए सेना को मैदान में उतारा और मार्शल लॉ लगाया गया। हजारों संताल आदिवासियों को गिरफ्तारी किया गया, लाठियां चली, गोलियां चलायी गयी। यह लड़ाई तब तक जारी रही, जब तक अंतिम आंदोलनकारी जिंदा रहा।

मंगल पाडे नहीं, तिलका मांझी और सिदो-कान्हू थे पहले स्वतंत्रता संग्रामी भारत का पहला स्वतंत्रता संग्राम 1857 में मंगल पाडे ने नहीं, 1771 में तिलका मांझी ने शुरु किया था। यह हूल विद्रोह था। बाद में 1855 में सिदो-कान्हू ने संताल विद्रोह को आगे बढ़ाया। लेकिन भारतीय इतिहासकारों ने संतालों के विद्रोह को लिखा ही नहीं। जबकि इसके सारे प्रमाण मौजूद हैं। हूल दिवस के मौके पर संताल विद्रोहियों को याद कर रहे हैं विशद कुमार।

सिदो-कान्हू की पेंटिंग

इसके पूर्व 1771 से 1784 तक तिलका मांझी उर्फ जबरा पहाड़िया ने ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध लंबी और कभी न समर्पण करने वाली लड़ाई लड़ी और स्थानीय महाजनों-सामंतों व अंग्रेजी शासक की नींद उड़ाए रखा। पहाड़िया लड़ाकों में सरदार रमना अहाड़ी और अमड़ापाड़ा प्रखंड (पाकुड़, संताल परगना) के आमगाछी पहाड़ निवासी करिया पुजहर और सिंगारसी पहाड़ निवासी जबरा पहाड़िया भारत के आदिविद्रोही हैं। दुनिया का पहला आदिविद्रोही रोम के पुरखा आदिवासी लड़ाका स्पार्टाकस को माना जाता है। भारत के औपनिवेशिक युद्धों के इतिहास में जबकि पहला आदिविद्रोही होने का श्रेय पहाड़िया आदिम आदिवासी समुदाय के लड़ाकों को जाता हैं जिन्होंने राजमहल, झारखंड की पहाड़ियों पर ब्रितानी हुकूमत से लोहा लिया। इन पहाड़िया लड़ाकों में सबसे लोकप्रिय आदि विद्रोही जबरा या जौराह पहाड़िया उर्फ तिलका मांझी हैं। इन्होंने 1778 ई. में पहाड़िया सरदारों से मिलकर रामगढ़ कैंप पर कब्जा करने वाले अंग्रेजों को खदेड़ कर कैंप को मुक्त कराया। 1784 में जबरा ने क्लीवलैंड को मार डाला। बाद में आयरकुट के नेतृत्व में जबरा की गुरिल्ला सेना पर जबरदस्त हमला हुआ जिसमें कई लड़ाके मारे गए और जबरा को गिरफ्तार कर लिया गया। कहते हैं उन्हें चार घोड़ों में बांधकर घसीटते हुए भागलपुर लाया गया। पर मीलों घसीटे जाने के बावजूद वह तिलका मांझी जीवित था। बताया जाता है कि खून में डूबी उसकी देह तब भी गुस्सैल थी और उसकी लाल-लाल आंखें ब्रितानी राज को डरा रही थीं। अंग्रेजों ने तब भागलपुर के चौराहे पर स्थित एक विशाल वटवृक्ष पर सरेआम लटका कर उनकी जान ले ली। हजारों की भीड़ के सामने जबरा पहाड़िया उर्फ तिलका मांझी हंसते-हंसते फांसी पर झूल गए। तारीख थी संभवतः 13 जनवरी, 1785। बाद में आजादी के हजारों लड़ाकों ने जबरा पहाड़िया का अनुसरण किया और फांसी पर चढ़ते हुए जो गीत गाए '' हांसी-हांसी चढ़बो फांसी ३! '' वह आज भी हमें इस आदिविद्रोही की याद दिलाते हैं।

तिलका मांझी संताल थे या पहाड़िया इसे लेकर विवाद है। आम तौर पर तिलका मांझी को मूर्म गोत्र का बताते हुए अनेक लेखकों ने उन्हें संताल आदिवासी बताया है। परंतु तिलका के संताल होने का कोई ऐतिहासिक दस्तावेज और लिखित प्रमाण मौजूद नहीं है। वहीं, ऐतिहासिक दस्तावेजों के अनुसार संताल आदिवासी समुदाय के लोग 1770 के अकाल के कारण 1790 के बाद संताल परगना की तरफ आए और बसे। 'द एनल्स ऑफ रूरल बंगाल', 1868 के पहले खंड (पृष्ठ संख्या 219-227) में सर विलियम विल्सर हंटन ने साफ लिखा है कि संताल लोग बीरभूम से आज के सिंहभूम की तरफ निवास करते थे। 1790 के अकाल के समय उनका पलायन आज के संताल परगना तक हुआ। हंटर ने लिखा है, '1792 से संतालों का नया इतिहास शुरू होता है' (पृ. 220)। 1838 तक संताल परगना में संतालों के 40 गांवों के बसने की सूचना हंटर देते हैं जिनमें उनकी कुल आबादी 3000 थी (पृ. 223)। हंटर यह भी बताता है कि 1847 तक मि. वार्ड ने 150 गांवों में करीब एक लाख संतालों को बसाया (पृ. 224)। 1910 में प्रकाशित 'बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियररू संताल परगना', वोल्यूम 13 में एल.एस.एस. ओ मेली ने लिखा है कि जब मि. वार्ड 1827 में दामिने कोह की सीमा का निर्धारण कर रहा था तो उसे संतालों के 3 गांव पतसुंडा में और 27 गांव बरकोप में मिले थे। वार्ड के अनुसार, 'ये लोग खुद को सांतार कहते हैं जो सिंहभूम और उधर के इलाके के रहने वाले हैं।' (पृ. 97) दामिनेकोह में संतालों के बसने का प्रामाणिक विवरण बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियररू संताल परगना के पृष्ठ 97 से 99 पर उपलब्ध है।

इसके अतिरिक्त आर. कार्सटियर्स जो 1885 से 1898 तक संताल परगना का डिप्टी कमिश्नर रहा था, उसने अपने उपन्यास 'हाड़मा का गांव' की शुरुआत ही पहाड़िया लोगों के इलाके में संतालों के बसने के तथ्य से की है। बांग्ला की सुप्रसिद्ध लेखिका महाश्वेता देवी ने तिलका मांझी के जीवन और विद्रोह पर बांग्ला भाषा में एक उपन्यास 'शालगिरर डाके' की रचना की है। अपने इस उपन्यास में महाश्वेता देवी ने तिलका मांझी को मुर्मू गोत्र का संताल आदिवासी बताया है। वहीं हिंदी के उपन्यासकार राकेश कुमार सिंह ने अपने उपन्यास 'हूल पहाड़िया' में तिलका मांझी को जबरा पहाड़िया के रूप में चित्रित किया है। बहरहाल, हूल विद्रोह की जो वजहें 18वीं सदी में थीं, उसी तरह की परिस्थितियां आज भी आदिवासी इलाकों में कायम हैं। पूंजीवादी घरानों के लिए आदिवासियों को जल, जंगल और जमीन से वंचित किया जा रहा है। विरोध करने पर उन्हें नक्सली कहकर उनका सरकारी नरसंहार भी जारी है। झारखंड में ही सीएनटी और सीएसटी एक्ट में बदलाव के जरिए आदिवासियों की जमीन को हड़पने की साजिश हो रही है। दिखावे के लिए उड़ता हाथी दिखाया जा रहा है। ऐसे में हूल विद्रोह की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है।

https://www.forwardpress.in/2018/06/tilka-manjhi-and-sido-kanhu-not-mangal-pandey-were-the-first-freedom-fighters-hindi/

***

10 जुलाई, 2018 को नवभारत टाइम्स में प्रकाशित लेख

फेसबुकिया राष्ट्रभक्ति

जब कभी फेसबुक, व्हाट्सएप, ट्विटर आदि को देखता हूँ तो राष्ट्रभक्ति के ऊपर महाभारत होता रहता है। इस बहस में तमाम निकम्मों का समय पास हो जाता है, अपनी पीठ भी थपथपा लेते हैं कि राष्ट्र की सेवा कर रहे हैं। कुछ महीनों से दुनिया के और देशों के सोशल मीडिया को इस दृश्य से देखने की कोशिश किया कि क्या वहां भी फेसबुकिया राष्ट्रभक्त हैं। तब पता लगा कि भारत में ही अचानक लाखों सोशल मीडिया पर राष्ट्रभक्ति का परचम लहराने वाले पैदा हो गये हैं। कुछ टिप्पणियां तो ऐसी देखने को मिली कि जिनमें राष्ट्र के प्रति नकारात्मकता न भी हो, तो इनके गाली -गलौज से जरुर हो जाएगी। फेसबुकिया ही नहीं अदालत और नेता भी इस जंग में शामिल होते रहते हैं। शब्दों से राष्ट्रभक्ति की जा रही है या कोई और भक्ति, राष्ट्रीय भावना जिनमें है वह एक स्वाभाविक है इसे और मजबूत बनाने के लिए शिक्षा, न्याय, सहिशुष्णता और भाईचारा आदि की भी भूमिका होती है लेकिन थोपने से तो संभव ही नहीं है। यदि ऐसा ही करके राष्ट्रभक्ति बढाने की स्पर्धा चलती रही तो अंततः परिणाम प्रतिकूल ही होगा ।

राष्ट्रभक्ति, प्यार और स्नेह कभी थोपने से नहीं मजबूत होते बल्कि सुबह-शाम पहाडा पढने- पढ़ाने से घटती ही है न कि बढती है । इसको समझने और समझाने के लिए माँ-बाप और बच्चों के बीच जो सम्बन्ध का उल्लेख करना उचित होगा। क्या बच्चे चिल्लाते हैं कि वो अपने माँ-बाप से प्यार करते हैं। अगर ऐसा वो करें तो समझो कि कहीं न कहीं सम्बन्ध की डोर में कमजोरी है। प्रेमभावना वह स्थिति होती है कि शब्दों से कम और व्यवहार में अधिक झलकती है। लोग गैर को प्रभावित करने के लिए कहीं ज्यादा प्यार और हमदर्दी दिखाते हैं और हो सकता है कि अन्दर से नापसंद ही करें। शब्दों से राष्ट्रभक्ति के खेल में मीडिया भी पीछे नही है, दुनिया के किसी और देश में शायद ही इतना प्रचार और दिखावा होता। देश का झंडा गलती से टेढ़ा हो जाये या गिर जाये तो महाभारत हो जाता है और उसी मात्र से राष्ट्र का अपमान हो जाता है। इस हिसाब से छड में राष्ट्रभक्ति और छड में ही अपमान, क्या यह इतना नाजुक हैं ? अदालतों ने तो हद कर दिया कि सिनेमा हॉल में शुरू में राष्ट्रगान करना अनिवार्य हो गया था और फिर बाद में निर्णय में परिवर्तन हुआ। अगर फिल्म शुरू करने से पहले कोई खड़ा होकर के राष्ट्रगान नहीं करता क्या इसी मात्र से राष्ट्र विरोधी हो गया और एक आतंकवादी खड़ा होकर के जोर-जोर से राष्ट्रगीत गाये तो क्या वह देशप्रेमी हो गया? उदाहरण के लिए अगर अमेरिका को देखें तो वहां के झंडे को परिधान ही नही बल्कि तमाम तरह से इस्तेमाल करते हैं। पार्कों में झंडे को बिछा कर बैठते भी हैं तो क्या कभी वहां चू-चां हुआ। एकता और राष्ट्रीय भावना वहां की देखने लायक है कि अमेरिका के ऊपर कोई हमला हो या कोई और समस्या तो वहां पर एक ही आवाज होती है लेकिन वहां पर फेसबुकिये राष्ट्रभक्त देखने को नजर नही आते हैं।

इन फेसबुकियों राष्ट्रभक्तों को एक काम दिया जाना चाहिए कि जो वो कह रह हैं उसके लिए कुछ करें। समाज में जहाँ भेदभाव हो रहे हो अगर मौके पर जाकर कुछ नही कर सकने का दम है तो सोशल मीडिया पर ही निंदा करें। देश में कई ऐसी जगह हैं जहाँ पर दलित की बारात नहीं निकल सकती तो क्या इन फेसबुकियों को उस पर महाभारत नही मचाना चाहिए। जिसके साथ भेदभाव हो रहा है उसकी सोंच समाज और देश के प्रति क्या होगी? वह इसी देश का नागरिक है और वह कैसा महसूस कर रहा होगा। सवर्ण का कुत्ता अगर दलित के हाथ से रोटी खाया तो उसको घर से निकाल दिया। तथाकथित राजपूती तरह का जूता दलित पहनता है तो भी पिटाई होती है, महिलाओं के साथ दिनदहाड़े भेदभाव होता रहता है तो ये राष्ट्रभक्त क्यों चुप रहते हैं? लोगों के पास रहने का घर नही, खाना नही और कपडा नही तो उसके हाल को जानों क्या वह राष्ट्रभक्ति की बात पहले सोचेगा या अपने पेट की भूख मिटाने की। शब्दों के राष्ट्रभक्त वीरों के लिए ये काम नही दिखता कि जहाँ लोगों में पेट की भूख मिटाने के लिए संघर्ष हो रहा हो, उनके लिए भी कुछ करें । आज भी दलित अछूत हैं और लाखों लोग सिर पर मैला ढो रहे हैं, इनके लिए कुछ करते हुए राष्ट्रीयता की जड़ को मजबूत किया जा सकता है। इन फेसबुकियों को क्या पता अपमान क्या चीज होती है। गाँधी जी को प्रथम श्रेणी के ट्रेन के डिब्बे से उतार कर तृतीय श्रेणी में भेज दिया और इससे वह इतना अपमानित महसूस किये कि सबकुछ छोड़कर अंग्रेजों को उखाड़ फेंकने का संकल्प ले बैठे । जो रोज मैला ढो रहा है और छुआ-छूत का शिकार हो वह कितना महान है कि बगावत न करके अन्य नागरिक की तरह की उसकी भावना देश के प्रति होती है।

राष्ट्रीयता एक मनोस्थिति और सोंच है जो बोल में नही बल्कि व्यवहार में देखी जा सकती है। यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें एहसास ज्यादा और अभिव्यक्ति कम है। कभी-कभी ऐसे लोग ज्यादा राष्ट्रभक्त बनते हैं जो चोरी, भ्रष्टाचार और कालाबाजारी में लिप्त हैं। जिस देश में आदमी के साथ भेदभाव हो और जीने के लिए साधन न हों, उसकी प्राथमिकता सबसे पहले पेट भक्ति और सम्मान भक्ति की होगी। जो गाँधी जी कहते नही थकते थे कि अगर एक गाल पर कोई चाटा मारे तो दूसरा भी दे देना चाहिए, जब साउथ अफ्रीका में उनको ट्रेन के प्रथम श्रेणी डिब्बे से उतार दिया गया उससे वह इतना अपमानित हुए कि अंग्रेजों को उखाड़ फेंकने की प्रतिज्ञा कर ली, ये फेसबुकिये अगर उन तमाम भेदभाव झेलने वालों के दुःख दर्द में शामिल होकर राष्ट्रभक्ति कर सकते हैं न कि सोशल मीडिया में गाली-गलौज या शब्दों से, जिस तरह की भाषा का इस्तेमाल किया जा रहा है उससे राष्ट्रभक्ति की भावना से दूर किया जा सकता है। फेसबुकिये राष्ट्रभक्त जाति और धर्म की ठेकेदारी का दावा जो ठोकते हैं वास्तव में इस मकसद में सबसे ज्यादा हानि भी वही पहुंचा रहे हैं।

***

परिसंघ का मण्डलीय सम्मेलन औरैया में संपन्न

दिनांक 22 जुलाई, 2018 को लखन वाटिका गेस्ट हाउस दिबियापुर रोड जनपद औरैया में अनुसूचित जाति/जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं अल्पसंख्यक संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ के तत्वावधान में न्याय पालिका, निजीक्षेत्र एवं पदोन्नति में आरक्षण हेतु एक विशाल जनसभा का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का शुभारंभ तथागत भगवान बुद्ध एवं विश्व रत्न बाबा साहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर जी के चित्र पर पुष्पार्पण एवं दीप प्रज्वलन कर किया गय।

जनसभा को परिसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. उदित राज जी ने संबोधित किया। अपने संबोधन के दौरान उन्होंने संगठन की नवोदित शाखा डी.ओ.एम (दलित, ओबोसी माइनॉरटी) के गठजोड़ को विस्तार से समझाया तथा सभी वर्ग को अपने हक और अधिकारों के प्रति जागरुक करते हुए उन्होंने डीओएम से जुड़ने का आहवान किया। तथा सच्चर कमेटी की रिपोर्ट का जिक्र करते हुए उन्होंने मुस्लिमों को उनके अधिकार के बारे में बताया। वहीं दलितों पर हो रहे पूरे भारत में शारीरिक हमले एवं उत्पीड़न की घटनाओं पर कड़ा रोष व्यक्त किया। उदित राज जी ने मंडल कमीशन का जिक्र करते हुए बताया कि ओबीसी वर्ग के लोगों को अधिक सजग रहने की आवश्यकता है। उन्हें मण्डल आयोग की सिफारिश लागू करानी हो तो परिसंघ का साथ दें। कार्यक्रम को प्राथमिक शिक्षक संघ के प्रदेश महामंत्री श्री जलवीर सिंह यादव जी ने भी सम्बोधित किया। वही कार्यक्रम के संयोजक श्री जयप्रकाश भास्कर जी तथा कार्यक्रम के संरक्षक मा. प्रदेश महासचिव श्री नीरज कुमार चक जी तथा कार्यक्रम के व्यवस्थापक श्री सुबोध कुमार बौद्ध जी, जिलाध्यक्ष श्री दर्शन लाल गौतम जी, एवं जिला प्रवक्ता श्री रामचंद्र जी एवं प्रभात सोनकर जी भी उपस्थित रहे।

कार्यक्रम का संचालन श्रीकृष्ण पिछड़ा जी ने किया। कार्यक्रम में महिला प्रकोष्ठ जनपद औरैया की जिला अध्यक्ष श्रीमती नितिन चौधरी जी ने माननीय राष्ट्रीय अध्यक्ष जी का पुष्पगुच्छ भेंटकर स्वागत सत्कार किया। कानपुर मण्डल के 6 जिलों के अलावा लगभग 15 जिलो के कार्यकर्ता अपने दल बल के साथ पहुंचे, जिसमें विशेष रूप से प्रदेश उपाध्यक्ष पँचमलाल जी, आगरा से आये जोन कॉर्डिनेटर्स मा रामखिलाड़ी वर्मा जी, मैनपुरी जिलाध्यक्ष कलपेंद्र भरतीयजी, लखनऊ जिलाध्यक्ष राजेश वर्मा जी कानपुर नगर जिलाध्यक्ष वतन पासवान डीओएम, जोनल कॉर्डिनेटर्स मा आर के कमल जी जिला महासचिव रवि कुमार, प्रचार मंत्री श्रीमती अनिता जी युवा साथी विवेक सिंह विराट एवं सैकड़ो कार्यकर्ता शामिल हुए।

इस सम्मेलन को इतने अच्छे व्यावस्थित रूप से पूरे सद्भाव के साथ आयोजन करने में प्रदेस महासचिव नीरज चक जी, कानपुर मण्डल महासचिव भास्कर जी, जिलाध्यक्ष दर्शन लाल जी, सुबोध बौद्ध एवं औरैया परीसंघ की पूरी टीम को बहुत बहुत बधाई तथा कार्यक्रम में शामिल सभी कार्यकर्ताओं को सादर धन्यवाद।

– सुशील कुमार कमल
प्रदेशाध्यक्ष, उ.प्र.

डॉ. उदित राज जी का फूलमाला से स्वागत करते हुए नीरज चक, सुशील कामल, सुबोध बौध्द, जयप्रकाश भास्कर एवं परिसंघ की टीम

परिसंघ का जिलास्तरीय सम्मेलन गाजियाबाद संपन्न

परिसंघ के जिलास्तरीय सम्मेलन में तथागत गौतम बुद्ध और विश्वरत्न बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर की प्रतिमा पर फूलमाला अर्पित करके परिसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. उदित राज जी ने कार्यक्रम की शुरूवात की। इस कार्यक्रम के अध्यक्ष जे. पी. सिंह जी जिलाध्यक्ष बी.एस. दीपक जी, वरिष्ठ नेता कालीराम तोमर जी, परिसंघ राष्ट्रीय सचिव देवी सिंह राना जी, महामंत्री धनश्याम जी, आप सब जानते हैं कि सन 2000 के बाद किस गति के बाद आरक्षण खत्म हुआ है। पहले 1 लाख 60 हजार का नौकरियों का विज्ञापन रोजगार समाचार में देखा जाता था। क्या आपके परिवार और समाज के जो ग्रज्यूवेट हो चुके है उनके लिए नौकरिया नहीं हैं, तो आप समझ सकते हैं किस प्रकार आरक्षण खत्म होता जा रहा है। जब बहुजन आंदोलन उपर जाता है तो अधिकार निचे क्यों आ जाते है। सन 1997 में एक समय ता जब 40 लाख एस. सी., एस.टी. कर्मचारी इस देश में होतो थे, अब सन 2018 में 20 लाख भी नहीं रहे। कितनी रफ्तार से नौकरिया घटती जा रही हैं। जब हमारी गर्दन में मटका और कमर में झाडु बांधी जाता था तभी गुजारा हो जाता था। गुजारा तो जानवरों का भी हो जाता है हम गुजारा मात्र के लिए जिन्दा नहीं है सम्मान और भागीदारी की लड़ाई है। जितनी रफ्तार से अधिकार छिना उतनी रफ्तार से पार्टी खड़ी हुई, आंदोलन खड़ा हुआ। किसी पर आंख बंद करके विश्वास नहीं करना चाहिए चाहे वो मैं ही हूँ। मैं अपने कार्यकत्ता को यह नहीं कहता कि आंख मुंद कर विश्वास करों अगर मैं काम नहीं करता हूं तो मुझ पर विश्वास करना छोड़ दो। अगर में रिजल्ट न मिले तो मेरा साथ देने की जरूरत नहीं हैं मैं हिसाब देता हूं।

जब मैं नौकरी करता था तो पांच आरक्षण विरोधी आदोश जारी हुए थे। उनको लेकर 1997 में परिसंघ बनाया। यह जो पांच आरक्षण विरोधी आदेश संकट खडा हुआ उसने लगभग उसी समय आरक्षण का खात्मा किया था। मेरे उस समय 1997 में मेरे नेतृत्व में परिसंघ बना। और 1997,98,99 और 2000 तक लगातार लड़ाई करके संविधान में तीन 81वां,82वां एवं 85 संवैधानिक संशोधन करवाए। तब जाकर छिना हुआ अधिकार वापस मिला। 4 नम्बर, 2001 को लाखों लोगों को बौद्ध धर्म कि दीक्षा दिलाई। यह संस्कृतिक परिर्वतन हुआ कि मेरा उदय हुआ कि मैं जाति के बंधन से मुक्त हुआ। जब कोई इसाई धर्म अपना था तो वह जॉर्ज बन जाता है, थॉमस बन जाता हैं। पर जो मनुवादी समाज ने हमें खाचे में बाटा हुआ हैं उससे हम नहीं निकल पा रहे है। बाबा साहेब ने रोटी-बेटी के संबध के लिए बौध्द धर्म अपनाया था कि जातिवाद खत्म हो क्या जातिवाद मिटा पाए? मान लो कि नहीं मिटा पाए तो कम से कम जाति को देखकर के नेता का आंकलन नहीं करना चाहिए, अपने बर्चो का कल्याण, अपने समाज का कल्याण देखना चाहिए कि कोन समाज से ले रहा है और कोन समाज को दे रहा हैं, मैंने समाज से लिया नहीं, मैंने बाराह-तेराह साल अपनी पार्टी चलाई मैं कोई चंदा नहीं लेता था। कमिश्नर ऑफ इनकम टैक्स था तब अपने पौसे से रैलीया की।

जो लोग आज कहते है कि मैं बीजेपी में चला गया तो मेरी इंडियन जस्टिस पार्टी थी तो क्या कभी एक रूपया दिया था। क्या कभी वोट दिया था। जब मैंने नौकरी से इस्तीफा दिया था तो किसीने पुछा था एक टाईम कि रोटी का किस ने पूछा कि मेरे बच्चों का क्या होगा? लेकिन कुछ लोग जिन्दा दिल कूपमानवता रहते है की वो सच्चाई नहीं देख पाते जिस रफ्तार से बहुजन आंदोलन पैदा हुआ उसी रफ्तार से नौकरी खत्म होती जा रही है। आज आरक्षण की वजह से तो हमारे समाज के लोग सी.ई.एल. कंम्पनी में नौकरी लग गई तो कोन आया? मैं ही आया। वो लोग कहा गए जिन्होने चंदा लिया। 40 साल से वोट लिया कभी अपने सुना है कि सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्ट में असंवैधानिक नियुक्तियां हो रही है। जो नियुक्ति सरकार को करनी चाहिए वे जज कर रहे हैं। जो संविधान बाबासाहेब ने बनाए उसके अनुसार जज कि नियुक्ति सरकार करेंगी न की जज करेंगा। जब 1993 में जज कि नियुक्ति जज ही करने लगे तब क्या उन्होनें अपने कार्यकर्त्ताओं को सड़को पर उतारा? जब उनके पास ताकत, कार्यकर्त्ता और करोड़ो रूपये थे। 1993 में यह व्यवस्था हुई तो क्यों लोग सड़को पर नहीं आए? आज यह हो रहा हैं कि पदोन्नती में आरक्षण संसद दे देती हैं, लेकिन सुप्रीम कोर्ट छिन लेता हैं। जाति के चश्मे से देखेगें तो गलतियां नजर नहीं आएंगी। लेकीन अगर विश्लेनात्मक तोर से देखेंगें तो नजर आएगा। आरक्षण सन 1990 के बाद 1995-2005 के बाद लगातार गिरता रहा हैं। आज कुल 800 विश्वविद्यालय होने वाली हैं तो क्या इसपर आंदोलन किया गया कि इसमें आरक्षण होना चाहिए इस शिक्षण में आरक्षण होना चाहिए? जिसने समाज से सहयोग और चंदा लिया हैं जो जनता संगठन हैं। उनका फर्ज नहीं बनता? आज सत्ता में रह कर भी जरूरी नहीं कि अपना काम करा सके, जाट समाज सत्ता में नहीं है फिर भी समाजिक आंदोलन हरियाणा में किया और आरक्षण लिया। दलित समाज ने 2 अप्रैल को आन्दोलन किया इन्होंने भी आरक्षण लिया 2 अप्रैल का सरकार पर जो असर हुआ वो संसद के 100 सांसद भी नहीं कर पाते। 2 अप्रैल के आंदोलन से आरक्षण के बहुत फायदा हुआ है। 2 अप्रैल जैसे आंदोलन लगातार होते रहे तो आरक्षण खत्म नहीं होगा बल्कि आरक्षण में बढ़ोत्तरी होती आरक्ष निजी क्षेत्र में भी आरक्षण मिल गया होता। मुंबई के 50 हजार किसानों ने लोन माफ करवानें के लिए रोड मार्च किया। तो उनका लोन माफ किया। इसकी जगह अगर 50 सांसद लोन माफ करवाने के लिए सरकार से कहते तब भी लोन माफ नहीं करवाते यह है समाज कि ताकत।

मैं जिस जाति में पैदा हुआ उस जाति को छोड़ा बाबासाहेब के पदचिन्हों पर चला हमने संसद में निजी क्षेत्र में आरक्षण का बिल पेश किया। जो 70 साल में किसी सांसद ने पेश नहीं किया। लेकिन यह काम की तारीफ कोई नहीं करता। मुझे मालुम है मैं ने जितनी कुर्बानी दी। अतिरिक्त कमिश्नर इनकम टैक्स से 2003 में इस्तीफा दिया। मान लीजए मैं सफल न होतो तो सड़क पर आ जाता कभी समाज ने सोंचा हैं?।

– कुणाल सोनी
मों.9716884560

डॉ. उदित राज जी के साथ दीप प्रज्वलित करते हुए देवी सिंह राणा, कालीराम तोमर, एवं गाजियाबाद जिलाअध्यक्ष बी.एस. दीपक एवं अन्य गण

डॉ. उदित राज जी का स्वागत करते हुए बी.एस दीपक

How Tamil Nadu changed after 1967

The focus on increased representation of other classes in jobs brought diversity in the administration

S. Narayan

After 1967, as changes swept through Tamil Nadu following the election of the first regional party government in the State, S. Narayan had a ringside view, first as a student and later as a part of the State administration. Before stints at the Centre, including being Economic Adviser to Prime Minister Atal Bihari Vajpayee in 2003-04, Mr. Narayan spent two decades in Tamil Nadu. "I saw ideology being translated into policies, programmes, and their delivery. I do not think such a change happened elsewhere in India," he writes in his new book, The Dravidian Years: Politics and Welfare in Tamil Nadu, explaining why he wanted to chronicle what happened. An excerpt:

Annadurai passed away in 1969 and M. Karunanidhi became Chief Minister. The Cabinet consisted of ideologues of the erstwhile anti-Hindi, anti-Delhi movements as well as young, educated, and articulate persons keen to show that the government could do as well, if not better, than earlier governments for development. The policies between 1969 and 1976 were a mix of these ideas.

There was strategic use of state patronage, and the use of local party cadres in administration. As a young officer, I witnessed representations from the public spearheaded by local party functionaries. This was a change. Earlier, I used to meet Panchayat Union Chairmen accompanied by their officers on matters pertaining to development. Now, there were district and local party functionaries bringing representations on the availability of irrigation, water, foodgrains, or the functioning of schools. Suddenly, we had to deal with representations from the party, rather than from the hierarchy. Upwardly mobile interest groups emerged, seeking the support of the party now in power. Initially, they pointed out public grievances for redressal, short-circuiting the established channels of administration, and, over the years, these have grown into assertive demands from the district administration. Representations from party cadres in administration are now the norm rather than an exception. While this serves to articulate public demands and grievances, it constrains the administration into looking at things only from a particular point of view.

Changes based on caste

There was focus on increased representation of other classes in jobs and in the party cadre. Data from the Tamil Nadu Public Service Commission indicates that between 1960 and 1980, the caste composition of those entering government service changed considerably, with a substantially greater proportion coming from the backward classes. Action for government recruitment from the backward, most backward, and Dalit castes ensured that the structure of the bureaucracy underwent a change. Several of the new personnel were from non-urban areas and could understand village-level conditions. The new dispensation was more in tune with the expectations and aspirations of the party in power.

In administration, at the level of the lower rung of police and revenue authorities, the representation of Dalits and other backward classes was more marked. The mere introduction of recruitment based on numerical strengths of the communities in society ensured that forward caste representation in new appointments went down drastically, while opportunities for backward castes and for Scheduled Castes and Tribes increased significantly. The proportion of Brahmins recruited into government jobs became smaller in tune with their proportion in the population. As a result, the number of entrants into government jobs became much more representative of the diversity of classes and castes in the population. This was a very significant change. On the one hand, it brought to fruition the proportional representation that EVR [E.V. Ramasamy] had aspired to right from the days of the Kanchipuram Congress in 1925. At the same time, it brought into government people from different backgrounds and aspirations as well as from small towns and rural areas, who were more in tune with the sentiments of the Dravidian parties, as were the students of Madras in my time. This was, and continues to be, a very important step forward in ensuring social balance in State administration and is instrumental in delivering the social welfare and social benefit services in succeeding administrations. The class composition of government service today is totally different from what it was when I joined service in 1965, and is definitely more representative of the diversity of groups in Tamil Nadu.

There was greater reliance on the district administration and on District Collectors. Collectors were the implementing arms of government policies at the district level, and the continuity from colonial days ensured that the administration remained committed to this. Senior members of the service at the Secretariat level were people who had worked under colonial rule, and the systems and processes that continued were a reflection of those standards. I remember that during my probation at the training academy in Mussoorie, multiple sessions were devoted to the importance of the role of the District Collector in ensuring coherent administration and planned development based on policies laid down hierarchically.

Influence of cadres

In Tamil Nadu, the situation changed after 1967. The DMK was a party that had emerged from a mass movement. It was important for them to, while in power, listen to and satisfy the expectations of the people. The DMK was also a disciplined organisation in which district secretaries had direct access to the top leaders. The district secretaries started interacting with District Collectors directly on matters pertaining to day-to-day administration. The post of District Collector became a powerful and coveted one. There were seasoned collectors like S.P. Ambrose, who had been at the helm of several districts, and was in Coimbatore in 1967. Ambrose initially found the change of having to deal with the new MLAs difficult, and mentioned several cases of attempts by newly elected politicians to take the law and administration in their own hands. He said that he had the support of the Ministers from the district, and the Chief Minister.

Gradually, this changed, especially after 1971 when the DMK came back to power with an overwhelming majority and the party cadres had more influence. The Collectors and the party district secretary became the most powerful arms of the State administration in the districts. There was naturally a trend towards State patronage in postings and the politicisation of administrative cadres. Senior members of the civil services retired in these years or were deputed to the Central government in senior positions, and the changes in State bureaucracy at the field level were quite palpable. This was true for the subsequent AIADMK regime as well.

https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/how-tamil-nadu-changed-after-1967/article24489089.ece

***

Govt's plan for PSUs to procure from Dalit SMEs fails to take off

P Vaidyanathan Iyer

In 2017-18, Central PSUs bought Rs 543.86 crore worth goods and services from SC/ST enterprises, accounting for just 0.46% of their total procurement of Rs 1,16,837.27 crore.

The government's ambitious plan to get Central PSUs to make 4% of their procurement from Dalit enterprises has not made much headway over the last six years.

In 2017-18, Central PSUs bought Rs 543.86 crore worth goods and services from SC/ST enterprises, accounting for just 0.46% of their total procurement of Rs 1,16,837.27 crore. Five years ago, in 2012-13, SC/ST enterprises sold goods and services valued Rs 419.93 crore, or 0.5% of the total procurement of Rs 85,155.18 crore by Central PSUs then.

The 'Public Procurement Order for Micro and Small Enterprises Order, 2012', issued by the UPA-II government on March 23, 2012, required Central PSUs to procure 20% of their annual value of goods produced and services rendered from MSMEs. A sub-target of 4% (20% of 20%) was earmarked for procurement from MSMEs owned by SC/ST entrepreneurs. The procurement goal of 20% from MSMEs was made mandatory from April 1, 2015. Those not meeting this were required to provide reasons to a review committee set up by the ministry.

FALLING SHORT

Procurement	2017-18	2016-17	2015-16	2014-15	2013-14	2012-13
From all MSMEs	26,545.17 (22.72%)	24,469.51 (17.96%)	18,246.15 (13.53%)	15,300.57 (11.61%)	12,425.89 (15.06%)	12.886.08 (15.31%)
SC/ST MSMEs	543.86 (0.46%)	328.76 (0.24%)	99.37 (0.07%)	59.37 (0.05%)	80.45 (0.1%)	149.93 (0.5%)
Total	**116,837.27**	**136,281.50**	**134,848.14**	**131,766.86**	**82,535.55**	**84,155.18**

Information obtained from the Office of the Development Commissioner, Micro Small and Medium Enterprises, under the Right To Information Act and from the Ministry of MSME website shows that Central PSUs' purchase of products and services from MSMEs and from SC/ST MSMEs dipped sharply in the first year (2014-15) of the NDA government, and rose in the subsequent years. While MSMEs accounted for almost 23% of the total procurement by Central PSUs in 2017-18, the share of SC/ST MSMEs was less than even 0.5%.

"The government did increase transparency by asking Central PSUs to not only make public their annual procurement targets, but also post the list of all goods purchased from and services rendered by MSMEs and SC/ST enterprises on separate websites," a government official told The Indian Express.

However, data obtained from the MSME ministry shows that of the total 330 PSUs administered by 37 ministries in 2017-18, 233 did not report their annual/monthly procurement targets from MSMEs and SC/ST enterprises or the services and goods procured from the MSMEs. "This suggests that less than a third of the Central PSUs were providing information as required. Consistent follow up is required," said an industry executive.

While the total number of MSMEs that benefited from the procurement policy during 2017-18 stood at 86,671, only 2,235 belonged to the disadvantaged communities (SCs and STs).

Six PSUs (BEL, BHEL, BPCL, ECGC Ltd, HPCL and National Small Industries Corporation Ltd) procured from more than 50% of all SC/ST MSMEs that benefited from the procurement policy.

In value terms, of the total Rs 543.86 crore procured from SC/ST MSMEs, the PSUs under the Defence and Petroleum and Natural Gas ministries accounted for four-fifths of the purchases. But even these PSUs were far short of their annual target (defence PSUs procured Rs 80.16 crore against a target of Rs 472.53 crore from SC/ST entrepreneurs and oil PSUs procured Rs 335.34 crore worth goods and services against a target of Rs 2,110.17 crore).

The public procurement order of 2012 was part of the UPA-II government's overall 'affirmative action' policy. While this order forced ministries and government departments to prevail upon PSUs to buy more from MSMEs and Dalit enterprises, the Prime Minister's Office separately monitored the private sector's affirmative action plan in meetings with industry chambers CII, Ficci and Assocham.

https://indianexpress.com/article/india/govts-plan-for-psus-to-procure-from-dalit-smes-fails-to-take-off-5270498/

***

VOICE OF BUDDHA

Publisher : Dr. UDIT RAJ (RAM RAJ), Chairman - Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42

● Year : 21 ● Issue 17 ● Fortnightly ● Bi-lingual ● Total Pages 8 ● 16 to 31 July , 2018

Facebook Patriotism

Whenever I look at Facebook, Whatsapp, Twitter etc., a situation of Mahabharata continues on patriotism. In this debate, some the useless people pass their time and also patt their back for serving the nation. For past few months, I have been reviewing the social media of the world and other countries trying to see whether their nationalists are also on Facebook. It was discovered that in India only millions of patriots have born on Facebook to show their patriotism. Some of their remarks are positive from all sides, but the use of foul words or language do spread negativity. Not only the Facebookians, but the courts and the political leaders also keep joining this war. Are we showing patriotism or any other devotion with the words ? Some have patriotism naturally from inside, but patriotism is enhanced by education, justice, tolerance and cooperation and not by imposing it forcefully. If such competition continues to increase the patriotism, then the result will eventually be unfavorable.

Patriotism, Love or Affection never strengthens by forcing someone. To understand this we take example of parents and their children, where none of them shout out their love to each other. If they do that, then it should be understood that there is some weakness in the relationship. Love is a situation that is expressed less in words and more in behavior. People may show more love and sympathy to influence an outsider but the may be disliked them from inside. In this game of patriotism by words, the media is not far behind. There is hardly much publicity and exposure in any other country in the world. Say for example, if the flag in India is accidentally crooked or fallen, then it becomes a situation of Mahabharata and the same is shown as an insults to the nation. According to this, in seconds it is judged as either patriotism or insult, is it so weak? The courts also played their game by making it mandatory to play the national anthem in cinema halls and then later there was a change in this decision. If a person does not stand for the national anthem does then he has become an anti-national, and if a terrorist is standing and singing the national anthem on the louds, then has he become a patriot? For example, if we look at the United States of America, they use the flag not only as an apparel but also in many other ways. They even sit on mats depicting their flags in the parks, they have never made any nuisance? Unity and national sentiment are worth observing there that whenever there is any attack on America or any other problem, then there is only one voice, and the Facebookian Patriots are seen no where.

These Facebookian Patriots shall be given the work to do something for those for whom they are raising voice on the social media. If some discrimination is happening in the society and these facebookians do nothing on the spot, then at least they should condemn it on social media. There are many places in the country where the Dalit procession can not be obtained, shouldn't these social media activists create a Mahabharat on that issue on social media. The one who is being discriminated, what shall he be thinking towards the society and the nation? He is also a ciizen of this nation and how must he be feeling discriminated? If the dog of an upper caste ate bread from hands of a Dalit, then the dog was thrown out of the house. When a Dalit wore a shoe similar to a Rajput, he was beaten up, there is also continuous discrimination with women then why do these patriots remain silent? People do not have shelter, food or clothes, then will that person first think of patriotism or battle for his basic necessities? Don't these patriots of words see that there are people who have nothing to eat and they should do something for them. Till now the Dalits are untouchable, many still carry the shit on their heads, doing something progressive for than also can strengthen our roots of patriotism. What do these Facebookian patriots know about discrimination or insult? When Gandhi Ji was removed from the first class train carriage to the third class one, he felt so insulted that he took the pledge to overthrow the British from India. It is so great that those who are treated as untochabes or who clean other's shit are serving the nation like other citizens without any rebel.

Patriotism is an attitude or a thought which can be seen more in behavior than in words. This is a situation in which the feeling is more and expression is low. Sometimes such people become more patriots who are involved in theft, corruption or black

marketing. In a country where there is a discrimination and no means to live, then the first priority of such person will be towards food and honor only. when Gandhi Ji was removed from the first class train carriage to the third class one, he felt so insulted that he took the pledge to overthrow the British from India. If these Facebookian patriots can be a part of their pain and suffering who have suffered such discrimination then why do they start using foul language on social media and degrade the feeling of patriotism. These Facebookian patriots who claim themselves to be patriots by using felthy words or common expression are the one who are causing the most damage to the nation and the feeling of patriotism.

***

Publisher, Printer and Editor - Dr. UDIT RAJ (FORMERLY KNOWN AS RAM RAJ), on behalf of Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42, Telefax:23354843, Printed at Sanjay Printing Works, WZ-4A, Basai Road, New Delhi.
Website : www.aiparisangh.com, www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com Computer typesetting by Ganesh Yerekar